भारत में इस वक्त संत-महंतों का कारोबार चरम पर है। एक ऐसे समय में जहां सब कुछ बाजार के हवाले है और सुख-सुविधाएं ही सफल जीवन की कसौटी बन चुकी हैं, जीवन की इस आपाधापी से पैदा हुई मानसिक अशांति और असुरक्षा बोध का फायदा ये तमाम संत भरपूर उठा रहे हैं। समाज में इनके बढ़ते वर्चस्व से जाहिर होता है कि हमारी मौजूदा शिक्षा प्रणाली एक लोकतांत्रिक समाज की अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतर रही है और वह लोगों को विवेकशील बना पाने में असफल रही है। यही वजह है कि इनका कारोबार दिन दूना फल-फूल रहा है। अकूत धन-संपत्ति के मालिक इन संतों का दखल चिन्ताजनक रूप से सिर्फ धार्मिक और आध्यात्मिक जीवन की बातों में ही नहीं रहा बल्कि अब ये शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी घुसपैठ कर चुके हैं। पिछले दो-तीन दशकों पर गौर करें तो इन संतों की कमाई हजारों करोड़ तक पहुंच चुकी है और पूंजी में ये व्यवसायियों से किसी मायने में कम नहीं ठहरते। इसी पूंजी के बल पर तमाम संतों के नाम पर कॉलेज या विभिन्न संस्थान चल रहे हैं जो पैसा कमाने के लिए ऊंची-ऊंची फीस लेकर भारतीय संस्कृति के पुरातन मूल्यों का गुणगान करते हुए जिस जीवन शैली को गरियाते हैं, विरोधाभासी तरीके से ये उसी बाजारवादी और पूंजीवादी व्यवस्था के लिए कार्यक्षमता तैयार करने में जुटे हैं।

लोकतंत्र में सभी को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार है लेकिन हर अभिव्यक्ति के सामाजिक निहितार्थ और राजनैतिक मायने होते हैं। श्री श्री रविशंकर के द्वारा सरकारी स्कूलों और शिक्षा पर जयपुर में दिया विवादास्पद बयान भी इस मायने में राजनैतिक है। ''सरकारी स्कूलों का निजीकरण कर देना चाहिए और सरकार को कोई स्कूल नहीं चलाना चाहिए''। किसके पक्ष में खड़ा है यह बयान? इसके राजनैतिक निहितार्थ क्या हैं? क्या यह भारत की गरीब आबादी को ध्यान में रखता है? यह शिक्षा के निजीकरण की पैरवी इस कदर करता है कि इस सामाजिक हकीकत को भी दरकिनार कर देता है कि समाज में आर्थिक विषमता की खाई के चौड़े होते पाटों में आज भी भारत की आबादी के करीब 70 फीसदी बच्चों को सिर्फ सरकारी स्कूल ही शिक्षा मुहैया करवा पा रहे हैं। शिक्षा के अधिकार कानून के तहत गरीब और वंचित वर्ग के बच्चों के लिए दिए गए 25 प्रतिशत आरक्षण को लेकर निजी स्कूलों का रवैया देखते बनता है। ये स्कूल अभी तक इन बच्चों को प्रवेश देने के लिए तैयार नहीं हैं। इससे इन निजी स्कूलों के सामाजिक सरोकारों का पता चलता है। क्या यह बयान देते हुए श्री श्री रविशंकर को इस बात का ख्याल रहा होगा कि शिक्षा का निजीकरण कर दिए जाने पर फीस नहीं दे पाने की वजह से ये बच्चे अशिक्षित ही रह जाएंगे?

बयान में जिन स्कूलों का गुणगान किया गया है उनके बारे में भी सब जानते हैं कि ये 'आदर्श' स्कूल हमारे देश के संविधान की धर्मनिरपेक्षता की भावना के खिलाफ धार्मिक कट्टरता को बढ़ावा दे रहे हैं। इन स्कूलों की तारीफ करके वे किस तरह की सामाजिक संरचना की पैरवी कर रहे हैं? दरअसल, इन संतों का पूरा कारोबार ही संकीर्ण धार्मिक अस्मिता की बुनियाद पर खड़ा है। यह संकीर्ण धार्मिक अस्मिता किस तरह धार्मिक कट्टरता का रूप ले लेती है यह गुजरात 2002 के सांप्रदायिक दंगों से पता चलता है। क्योंकि धार्मिक अस्मिता पर अतिशय दिया जाने वाला जोर कभी भी धार्मिक कट्टरता में परिणित हो सकता है। समरस और सहिष्णु समाज की कल्पना तक इनके मन में नहीं है। अन्यथा क्या वजह है कि भारत में होने वाली सांप्रदायिक हिंसा पर इनके किसी तरह के बयान नहीं आते?

ये संत सिर्फ धार्मिक ही नहीं बल्कि समाज में जातिगत और जेण्डर गैर-बराबरी को भी कायम रखना चाहते हैं। समाज में समता और बराबरी इनके एजेण्डा का हिस्सा नहीं है। इनका पूरा दर्शन संपन्न और मध्यमवर्ग के हित में खड़ा है। इनकी कमाई के स्रोत भी यही वर्ग है। गरीबी, जाति और लिंग पर इनके प्रवचन इनकी विचारधारा का खुलासा करते हैं। कभी भी इन संतों के बयान देश में होने वाली जातिगत हिंसा या स्त्रियों के प्रति होने वाली हिंसा पर नहीं सुनाई देते। ये एक ऐसे व्यक्तिवादी समाज की रचना करने में जुटे हैं जो जैसे-तैसे अपने हितों को साध ले। संत-महंतों की फलती-फूलती फौज भारत जैसे लोकतांत्रिक समाज के लिए खतरा बन चुकी है। ◆